कला–एक सफल अभिव्यक्ति

रीतिका गर्ग*

भारतीय कलाकार के लिए कला एक साधना है, जिसमें अनूठी आकर्षण शक्ति है। कला की प्रेरणा सौन्दर्य है और कला सौन्दर्य की प्रतिष्ठा करती है। कला एक सफल अभिव्यक्ति का नाम है और अनुभूति जब तक सफल न हो अभिव्यक्ति नहीं हो सकती। आत्मोपलब्धि की सत्य प्रतिति का रूप विधान द्वारा सृष्टि ही कला है, गायक उसे ध्वनि से, चित्रकार रंग रेखा से, वास्तुकार ईट पत्थर से, कवि शब्द वाक्यों से रूपापित करते हैं।1 कला भावना की ही अभिव्यक्ति का नाम है।

कला सृजन का चेतन माध्यम कलाकार है। कलाकार द्वारा सृजित कलाकृति में कलाकार के आदर्श, उसकी उच्चता, अनुभूतियों की सत्यता, कल्पनाओं की स्वच्छता उसकी वेदना, अवसाद और जीवन की सरलता, सरसता के साथ–साथ उसके चरित्र के सौरभ का समावेश होता है। उनमें उत्तरोत्तर मानवता का विकास होता है परिणामतः असाधारण प्रेम, आनन्द, विनय, भक्तिभाव जागृत होते हैं, नूतन आदर्शों का उदय होता है, इस स्थिति में उसकी कला उच्चतम लक्ष्य को प्राप्त कर लेती है। कलाकार की सृजित कृति उसकी आरम्भिक उच्चता का प्रत्यक्षीकरण कराती है। यह सभी, कलाकार के व्यक्तित्व की विकसित अवस्था का परिणाम है। यही सामाधिस्तता है जिसे योग द्वारा प्राप्त किया जाता है।

लियोनार्डो के अनुसार कलाकार जिन आकृतियों की रचना करता है वे उसके आन्तरिक भावों पर आधारित होती है अर्थात कला के रूपों में कलाकार के मन के भावों की अभिव्यक्ति होती है। अतः कला केवल अनुकृति अथवा कल्पना न होकर अभिव्यक्ति भी होती है। वांछित माध्यमों द्वारा अपनी अनुभूति को अभिव्यक्त कर कलाकृति का सृजनकर्ता कलाकार कहलाता है। भारतीय कला साहित्य में पाणिनी ने कलाकार के लिए शिल्पी शब्द का प्रयोग किया है। एक सफल कलाकार सौन्दर्य अभिव्यक्ति के क्षणों में उस स्थिति में पहुँच जाता है, जिसे योगीजन अनेक वर्षों की तपस्या के पश्चात् ही प्राप्त कर पाते हैं। कलाकार की क्षमता अनुभूति और अभिव्यक्ति दोनों पक्षों का प्रतिनिधित्व करती है। कलाकृति की श्रेष्ठता कलाकार की अनुभूति की गहराई और उसकी अभिव्यक्ति की सफलता से आंकी जाती है। अब प्रश्न यह उठता है कि अभिव्यक्ति क्या है। इससे सम्बन्धित विभिन्न मत हैं।

रस्किन के अनुसार– ''हर एक महान् कला ईश्वरीय कृति के प्रति मानव–आह्लाद की अभिव्यक्ति है।'' डॉ. भोलाशंकर तिवारी के अनुसार – ''कला में मनुष्य अपनी अभिव्यक्ति करता है।'' मैथलीशरण गुप्त के अनुसार– ''कला वास्तव में शिवत्व की उपलब्धि के लिए सत्य की सौन्दर्यमयी अभिव्यक्ति है।'' जगत प्रसिद्वभारतीय कवि रवीन्द्रनाथ टैगोर के अनुसार– ''कला में मानव स्वयं अपनी अभिव्यक्ति करता है और वस्तु की नहीं, अभिव्यक्त वस्तु का स्थान तो विज्ञान तथा दर्शन के ग्रन्थों में निहित होता है।''

* असिस्टेंट प्रोफेसर,, चित्रकला विभाग, यूनिवर्सिटी ऑफ राजस्थान, जयपुर, (राजस्थान)

कला में रूप, भोग एवं अभिव्यक्ति– तीन तत्व व्यापकता से विद्यमान हैं। कला में अभिव्यक्ति के लिए स्वच्छन्दता उसी प्रकार महत्वपूर्ण हैं, जिस प्रकार जीवन के लिए प्राण। कला में अभिव्यक्ति को सृजन कहा गया है। अमूर्त अनुभूति को मूर्त करना ही कला की अभिव्यक्ति है। जिसमें रूप और भोग दोनों ही तत्व विद्यमान रहते हैं, उसी को कलात्मक सौन्दर्य कहते हैं। भारतीय कला में सौन्दर्य उसका प्राण माना गया है। लेकिन आज सम्पूर्ण विश्व कलात्मक सौन्दर्य को सफल भावात्मक अभिव्यक्ति के नाम से ही पुकारता है। अभिव्यक्ति दो स्तरों पर होती है एक मन में तथा दूसरी स्थूल दृश्य रूप में।

यह तो निश्चित है कि मूर्तरूप तक आने की प्रक्रिया से पूर्व शून्य अन्तराल पर एक अस्पष्ट अभिव्यक्ति मन में हो जाती है। यद्यपि वह अस्थाई होती है किन्तु उसकी तीव्रता इतनी होती है कि वही तीव्रता मूर्तरूप के आने तक अभिव्यक्ति को बल प्रदान करती रहती है। मन में होने वाली अभिव्यक्ति एक अदृश्य चरण है जो रचानाकार को मूर्तरूप में सृजन करने को विवश कर देती है। प्रसाद ने ''आंसू'' काव्य में जो पीड़ा को घनीभूत होना कहा है वह मानसिक अभिव्यक्ति है। इसलिए यह माना जा सकता है कि जो रूपाकृति मूर्त दिखाई देती है वह मानसिक अभिव्यक्ति की अनुकृति अथवा अभिव्यक्ति है, किन्तु मानसिक अभिव्यक्ति की संप्रेषणीयता के लिए उसका चाक्षुष रूप में आना आवश्यक है। अतः बाह्य अभिव्यक्ति की महत्ता को कम नहीं आंका जा सकता।

कलाकार जब तक किसी सत्य, वस्तु, रूप, आकृति, भाव की अनुभूति अपने अन्तःकरण में नहीं कर लेता तब तक वह उसे अपनी कृति में अभिव्यक्त नहीं कर सकता। इस प्रकार कला सृजन का सम्पूर्ण रहस्य कलाकार में ही निहित होता है। अनुभूति में अभिव्यक्ति के आमंत्रण का भाव अर्न्तनिहित रहता है। विश्व से प्रायः सभी कलाकार अपनी कलाकृतियों में आन्तरिक अभिव्यक्ति को ढालते रहे हैं, मूर्तरूप देते रहे हैं किन्तु आन्तरिक अनुभूति अपनी समस्त तीव्रता और गुणों के साथ पुनरंकित नहीं हो पाती फिर भी रचना की दृश्य अभिव्यक्ति आन्तरित रूप से ही प्राण और सौन्दर्य प्राप्त करती है।

कला में भाव की अभिव्यक्ति होती है – इसे समझने से पूर्व सामान्य रूप में अभिव्यक्ति क्या है, यह देखना चाहिये। किसी व्यक्ति के मन में जब कोई भाव पहले– पहल उठता है, तो उसका स्वरूप स्पष्ट नहीं होता। वह अपने मन में एक प्रकार की बेचैनी या हलचल का अनुभव करता है। इस स्थिति में वह किसी दबाव का भी अनुभव करता है। इस स्थिति में से निकलने के लिये वह भाषा का प्रयोग करता है जिससे मन का भाव भी स्पष्ट हो जाता है और मन का दबाव भी समाप्त होकर हल्कापन अनुभव होने लगता है। इस क्रिया के पश्चात् भाव हमारे मन से निकल जाता है। किसी दूसरे व्यक्ति के सामने जब हम अपने भाव को अभिव्यक्त करते हैं तो हमारा उद्देश्य उस व्यक्ति में उसी प्रकार के भाव जगाना न होकर अपना भाव उसे समझाना होता है कि हम कैसा अनुभव कर रहे हैं। अतः कला का कार्य किसी भाव को अभिव्यक्त करना और दूसरों को समझाना होता है।

इस प्रकार अनुभूति का सृजन से घनिष्ठ सम्बन्ध है, क्योंकि बिना अनुभूति के अभिव्यक्ति का प्रत्यक्षीकरण हो ही नहीं सकता। कलाकार की अनुभूति कला सृजन में एक अनिवार्य तत्व है क्योंकि इससे प्रत्येक स्तर में चित्रत्व की कल्पना अथवा बिम्ब विधान

समाविष्ठ रहता है, जिसे वह समग्र या आंशिक रूप से अभिव्यक्त करने के लिये आतुर रहता है, कभी–कभी उसकी यह आतुरता उन्माद की स्थिति तक पहुँच जाती है, सम्पूर्ण कलाकृतियां इसी आतुरता का प्रतिफल हैं। अभिव्यक्ति एक ऐसी क्रिया है मानो कलाकार अपने आपसे बाते कर रहा हो और दर्शक उसे सुन रहे हो।

जब कलाकार द्वारा व्यक्त भाव को दर्शक समझते हैं तो वे अपने भावों का कलाकार की भाषा में ही अभिव्यक्ति करते हैं। ऐसे दर्शकों का कलाकार से भेद नहीं नहीं माना जाता। कालारिज का कथन है कि कलाकार अपने भावों को अभिव्यक्त करके हमें हमारे स्वयं के भावों को अभिव्यक्त करने का अवसर प्रदान करता है। इस प्रकार कलात्मक अभिव्यक्ति कोई ऐसी वस्तु नहीं है जिसे केवल सुसंस्कृत लोग या दूसरे कलाकार ही समझ सकें। भाव की कलात्मक अभिव्यक्ति और सामान्य अभिव्यक्ति में भी अन्तर है। कलात्मक अभिव्यक्ति में यह समझ रहती है कि हम क्या व्यक्त कर रहे हैं और किस प्रकार व्यक्त कर रहे हैं, किन्तु सामान्य अभिव्यक्ति में हम भावाभिभूत हो जाते हैं और हमारा शरीर हमारे वश में न रहकर भावावेश के लक्षण प्रगट करने लगते हैं। कलाकार का लक्ष्य केवल यह समझाना होता है कि वह किस भाव के विषय में अभिव्यक्ति कर रहा है।

भारतीय कलाकार ने भौतिक जगत से न कभी प्रेरणा ली और न उसे अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया। उसने अपने अन्तरतम में प्रतिष्ठित होकर, जिस परमतत्व की प्राप्ति की, उसी को रूपायित करना अपना ध्येय बनाया। इस प्रकार भारत में आत्मा के अभ्यान्तर भावों को अभिव्यक्ति करने की परिपाटी रही है और भारतीय शास्त्रों ने यही आदर्श कलाकार के सम्मुख भी रखा है। कलाकार जिन भावों की अभिव्यक्ति कलाकृति के माध्यम से करता है वे भाव उसकी सजग अथवा विचारपूर्ण स्थिति वाले भाव होते हैं। अभिव्यक्ति केवल भाव को ही प्रकट नहीं करती बल्कि हमारे व्यक्तित्व से एकाकार होती जाती है और इस प्रकार हमारे व्यक्तित्व के विकास में भी सहायक बनती है।

अभिव्यक्ति कोई प्रस्तुत की जाने वाली वस्तु न होकर मन में होने वाली एक क्रिया है। इस आन्तरिक क्रिया को बाहरी रूपों में व्यक्त करना कला है। इसके विषय जब श्रृंगार आदि वृत्ति से सम्बन्धित होते है तो अभिव्यक्ति सुन्दर प्रतीत होती है किन्तु जब भय, क्रोध, घृणा आदि से सम्बन्धित होते हैं तो अभिव्यक्ति को सुन्दर नहीं कहा जाता, फिर भी कलात्मकता इसको महत्व प्रदान करती है। प्रत्येक कलाकृति में कलाकार अभिव्यक्ति के ऐसे उपायों का सहारा लेता है जो उस कृति की रचना के समय ही तात्कालिक रूप से उसकी समझ में आते हैं। कलाकार, पिरामिडों में रेगिस्तान की विशालता, ऐलीफेण्टा में समुद्र के एकान्त द्वीप और कोणार्क में सागर में से उगते सूर्य के द्वारा अपने भावों को अभिव्यक्त कर दर्शक को एक नवीन सौन्दर्यमय आनन्दलोक में ले जाता है, जहाँ दर्शक आत्मविभोर होकर विस्मृत हो जाता है तथा कलाकार के भावों में ही लीन हो जाता है।

वास्तव में जिन विविध पक्षों को कलाकार प्रस्तुत करता है उन्हीं का रसास्वादन दर्शक करता है। यही कारण है कि यूनान की वीनस, अजन्ता की अप्सराएं, खजुराहों की सुर–सुन्दियां, पेरिस का ऐफिल टावर, दक्षिण भारत के मन्दिरों के गोपुर तथा कालिदास की रचनाएं आज भी सौन्दर्य की अमर प्रेरणा बने हुए हैं।

संदर्भ–सूची

1. भार्गव, डॉ. सरोज, सौन्दर्य बोध एवं ललित कलायें, कला प्रकाशन, वाराणसी, 1999, पृ. सं. 66
2. भार्गव, डॉ. सरोज, सौन्दर्य बोध एवं ललित कलायें, कला प्रकाशन, वाराणसी, 1999, पृ. सं. 57
3. अशोक, कला सौन्दर्य और समीक्षा शास्त्र, ललित कला प्रकाशन, अलीगढ़, 1994, पृ. सं. 07
4. पाणिनी– अष्टाध्यायी 3.1.146
5. भार्गव, डॉ. सरोज, सौन्दर्य बोध एवं ललित कलायें, कला प्रकाशन, वाराणसी, 1999, पृ. सं. 11
6. गुप्त, डॉ. जगदीश, भारतीय कला के पद्चिन्ह, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1961, पृ. सं. 09
7. तिवारी, डा. भोलानाथ, सम्मेलन पत्रिका, कला अंक, पृ.सं.–24
8. गुप्त, मैथलीशरण, साकेत सर्ग–5
9. सक्सेना एवं सरन, कला सिद्वान्त और परम्परा, प्रकाश बुक डिपो, बरेली, 1987, पृ. सं. 132
10. श्रोत्रिय, डॉ. शुकदेव, कला विचार, चित्रायन प्रकाशन, मुजफ्फरनगर, 2001, पृ. सं. 12
11. अशोक, कला सौन्दर्य और समीक्षायाास्त्र, ललित कला प्रकाशन, अलीगढ़, 1994, पृ. सं. 118
12. भार्गव, डॉ. सरोज, सौन्दर्य बोध एवं ललित कलायें, कला प्रकाशन, वाराणसी, 1999, पृ. सं. 62
13. अशोक, कला सौन्दर्य और समीक्षाशास्त्र, ललित कला प्रकाशन, अलीगढ़, 1994, पृ. सं. 120
14. भार्गव, डॉ. सरोज, सौन्दर्य बोध एवं ललित कलायें, कला प्रकाशन, वाराणसी, 1999, पृ. सं. 61